शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

भारतेंदु के प्रहसन साहित्य में हास्य-व्यंग्य

अर्जुन पासवान (शोधार्थी)
हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम, भारत

शोध संक्षेप

साहित्य में प्रहसन हमेशा से एक बहुउद्देशीय रचना रहा है।भारतेंदु के सामने इस विधा के कोई आधार नहीं मिलते फिर भी उन्होंने जब इस विधा में अपने देश के लोगों के यथार्थ जीवन को प्रस्तुत किया तब पाठकों ने उसे खूब सराहा। उन्होंने इस विधा के जरिए पहली बार समस्त भारतीयों के मन में अपनी सभ्यता और संस्कृति के प्रति श्रद्धा जगाने तथा तत्कालीन अंग्रेजी शासकों के क्रूरतापूर्ण व्यवहार के प्रति ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास किया। यही कारण है कि प्रहसन तत्कालीन समाज के कुप्रथाओं पर करारा व्यंग्य है। व्यंग्य और प्रहसन शैली भारतेंदु युग की एक महान देन थी। भारतेंदु द्वारा रचित प्रहसन अपने युग के उच्च कोटि के प्रहसन रहे। उस युग के प्रहसनों पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार किया जाय तो उक्त प्रहसन अपने युग की सर्वश्रेष्ठ नाट्य कृतियों के रूप में पहचाने जाते हैं। अपने देश की तत्कालीन सामाजिक स्थिति के अनुरूप ही उन्होंने अपनी प्रहसनों में व्यंग्य का लक्ष्य सामाजिक कुरीतियाँ, समाज में असहाय नारी की स्थिति, पश्चिमी सभ्यता के अंध उपासकों का सामाजिक दृष्टिकोण, धर्म के कथित ठेकेदारों का भ्रष्टाचार आदि व्यापक मनोवृत्तियाँ कार्य करती हुई दृष्टिगत होती हैं। भारतेंदु ने जिन उद्देश्यों को लक्ष्य कर अपने प्रहसनों की रचना की वह आज के संदर्भ में भी बेहद लोकप्रिय एवंप्रासंगिक है जिसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता।

बीज शब्द : *भारतेंदु युगीन प्रहसन, हिंदी साहित्य, व्यंग्य, देश*

हिंदी साहित्य में प्रारंभ से ही साहित्य को काव्य की संज्ञा दी जाती रही है और उसी काव्य को विद्वानों ने पुनः दो भागों में विभाजित करते हुए एक को श्रव्य काव्य तो दूसरे को दृश्य काव्य कहा। इसी दृश्य काव्य के अंतर्गत हमारे यहाँ नाटक का उल्लेख मिलता है। आचार्य भरतमुनि जैसे विद्वानों ने इसी नाटक के लिए नाट्य शब्द का प्रयोग करते हुए उसे पुनः दो स्वरूपों में विभाजित किया : रूपक और उपरूपक और प्रहसन भी इसी रूपक का अंश है। साधारण अर्थ में कहें तो हास्य प्रधान नाटक ही प्रहसन कहलाते हैं। प्रहसन के मूल दो भाग हैं : शुद्ध प्रहसन और संकीर्ण प्रहसन। दरअसल आभिजत्य तथा सुसभ्य लोगों के साथ नीच प्रकृति के व्यक्तियों के बीच के परिहास पूर्ण कथनों को दर्शाया जाता है, तब उसे प्रहसन कहा जाता हैं। वहीं निकृष्ट व अधम श्रेणियों के बीच के परिहास पूर्ण संवादों को संकीर्ण प्रहसन कहा जाता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि प्रहसन रूपक की एक उत्कृष्ट विधा है। इसकी कथावस्तु कल्पना की भावभूमि पर बहुत प्रभावशाली ढंग से आधारित होती है। यह व्यंग्य का एक अनुपम माध्यम है, जिससे अगर चोट की जाय तो लक्षित व्यक्ति तिलमिला उठता है। धार्मिक,

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों का पतन होने पर हिंदी साहित्य में अधिक अधिक से संख्या में प्रहसन लिखे गए।

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में अन्य गद्य विधाओं की तरह ही हास्य-व्यंग्य की शुरुआत भी भारतेंदु हरिश्चंद्र से हुई। हिंदी साहित्य में समस्त गद्य विधाओं को जन्म देने वाले बाबू भारतेंदु जी ने ही इसका सफल और सार्थक प्रयोग किया। वे एक प्रसिद्ध प्रहसनकार रहे। इन्होंने तद्युगीन सामाजिक परिस्थितियों के बारे में जनजागरण चेतना उत्पन्न करने के लिए सर्वप्रथम व्यंग्य विधा का प्रयोग किया। इनके द्वारा प्रयुक्त व्यंग्य ने समाज को बदलने में सहायता की और अधःपतन के कगार पर पहुँचे भारतीय समाज को पुनः अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाया। लोगों में अन्धविश्वासों के प्रति, रुढ़ियों के प्रति, धार्मिक अनाचारों के प्रति तथा ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा किये गए अत्याचारों के प्रति परोक्ष रूप में व्यंग्य के अमोघ अस्त्र का प्रयोग करते हुए समाज ने अपने स्वत्व को आंका और दृढ़ विश्वास के साथ तद्युगीन परिस्थितियों का सामना किया। इनके कुछ प्रमुख प्रहसन इस प्रकार हैं : 'वैदिकी हिंसा-हिंसा न भवति, 'अंधेर नगरी', विषस्यविषमौषधम' 'जाति विवेकनी सभा' आदि।

भारतेंदु के प्रहसन में सामाजिक हास्य-व्यंग्य

भारतेंदु हरिश्चंद्र एक सच्चे देशभक्त साहित्यकार थे। उन्होंने अपनी सुख-सुविधा से पहले सदैव अपने देश की अस्मिता की चिंता की। पिता के अंग्रेज सरकार के कर्मचारी होने के बावजूद भारतेंदु अपने देश की हालत से त्रस्त होकर अपनी अंतरआत्मा को रोक न सके और देश के लोगों को जगाने हेतु हास्य-व्यंग्य, पेरोडी आदि जैसी शैलियों में अपनी रचनाएँ लिखी। उनकी समस्त रचनाएँ तत्कालीन युग की सच्ची दस्तावेज हैं। उनके द्वारा रचित 'पाखंड विडंबना' एवं 'वैदिकी हिंसा-हिंसा न भवति' आदि प्रहसनों में उन्होंने अपनी देश की सभी सामाजिक परिस्थितियों की सभी विसंगतियों के उदाहरण सहित प्रस्तुत किया है।

पाखंड-विडंबना भारतेंदु का अनूदित एकांकी प्रहसन है। इसमें उनका हास्य-व्यंग्य एक उच्चादर्श के प्रतीक के रूप में झलकता है। उन्होंने अपनी हास्य-व्यंग्य के लिए सदैव यथार्थपरक घटनाओं को ही चुना। उन्होंने अपने पात्रों के अनुरूप ही उन्हें भाषा चयन की स्वतंत्रता प्रदान की। जैसे इसी प्रहसन की अगर बात करें तो उन्होंने इसमें दिगंबर सिद्धांत 'श' और 'स' के लिए 'छ', 'र' के स्थान पर 'ल', 'ट' के स्थान पर 'त' का प्रयोग करता है। ये दोनों सदैव दूसरों को अपनी तर्कजाल, पाखंड और तामसी श्रद्धा में फँसाने का षडयंत्र करते रहते हैं। लेकिन ये दोनों कैसे स्वयं की भाँति खुद भी अपने से बड़े पाखंडियों जैसे कापालिक सोम सिद्धांत और उसकी कापालिनी वेशी आदि की तामसिक शक्ति का शिकार होते हैं, यही इस प्रहसन का मूल बिंदु रहा। कापालिनी से लिपटने के बाद बौद्ध भिक्षु इसके सुख से अनभि दिगंबर सिद्धांत से कहता है, "अले दिगम्बल, तू अबी कपालिनी का छुख का जानै। कापालिनी से लिपटने के बाद स्वयं दिगंबर कहता है - अहाह ! वाह रे। कपालिनी गले लाग वारो सुख, अरी सुंदरी एक बार तो फेर गरेसू लपटिजा (स्वगत) अरे एसी समय नागो रहिबो उचित नहीं तासू लगोटी लगाय लेऊँ तो ठीक परै।"**1**

भारतेंदु की 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति एक बेहद प्रसिद्ध प्रहसन रहा है। ऊपर से देखने से यह प्रहसन वेद, पुराण, शास्त्र, तंत्र आदि पर आधारित बलि और माँस सेवन जैसे कृत्यों को

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

निंदा करने वाली एक प्रखर प्रहसन है। इसमें वेद, धर्म, मंत्र आदि के द्वारा मासांहारी को तथा दूसरे के माँस खाकर अपना माँस बढ़ाने वाले को शुद्धि करने की प्रकिया के उदाहरण देखने को मिलते हैं।

इसके एक प्रसंग में राजभवन की एक सभा में पुरोहित और मंत्री माँस भक्षण को शास्त्रसम्मत बताते हुए दिखते हैं। क्या उस समय समाज का यहीं रूप था तो हम कहेंगे कि उस समय समाज का जो भी रूप रहा हो, लेकिन आज के समाज के संदर्भ में यह बेहद प्रासंगिक लगता है। भारतेंदु सच में भविष्य द्रष्टा थे और उन्होंने आज से लगभग 150 साल पहले ही आज के इस आधुनिक समाज की रूपरेखा सटीक ढंग से प्रस्तुत कर दी थी।

इस प्रहसन में भारतेंदु ने अपनी शब्द क्रीड़ा के आधार पर इसे अधिक विनोदी बनाने सक्षम रहे। जैसे एक प्रसंग देखें, जहाँ विदूषक वेदांती की खिल्ली उड़ाता हुआ कहता है कि :

“क्या वेदांती जी आप माँस खाते हैं कि नहीं

वेदांती - तुमको इससे कुछ प्रयोजन है ?

विदूषक - नहीं कुछ प्रयोजन तो नहीं है। हमने इस वास्ते पूछा कि आप वेदांती अर्थात् बिना दाँत के हैं तो आप माँस भक्षण कैसे करते होंगे।”**2**

वहीं उनकी ‘वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति प्रहसन समाज में नश्तर की काट की जगह हथौड़े की चोट करता है। उसमें जगह-जगह पर स्तंभित कर देने वाली बनारसी खुलापन के उदाहरण मौजूद है। जो ग्राम्य दोष से भी परहेज नहीं करता। विदूषक पुरोहित को बलि कराते रहने की सलाह देता है और कहता है कि, हे पुरोहित, नित्य देवी के सामने मराया करो और प्रसाद खाया करो।”**3** इस तरह स्थूल हास्य-व्यंग्य के अनेक उदाहरण इस प्रहसन में आसानी से देखे जा सकते हैं।

भारतेंदु के प्रहसन में राजनैतिक हास्य-व्यंग्य

भारतेंदु के राजनैतिक प्रहसनों में ‘अंधेर नगरी’ तथा ‘वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति का नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें उन्होंने अपनी राजनैतिक हास्य-व्यंग्य को बड़े तीखे ढंग से प्रस्तुत किया है। जब ब्रिटिश और अफगानों के बीच युद्ध चल रहा था और उस युद्ध में ब्रिटिशों की हार हुई तब उस पर व्यंग्य करते हुये भारतेंदु ने अपने प्रहसन ‘अँधेर नगरी’ में उनके पात्रों बादाम-पिस्ते वालों के जरिए अपने विचार कुछ इस तरह से अभिव्यक्त किये “अमारा ऐसा मुल्क जिसमें अँग्रेजों का दाँत खट्टा हो गया। नाहक को रुपया खराब किया बेवकूफ बना।”**4** मानों वे अपने लोगों के मन से अंग्रेजी सत्ता के भय को दूर करते हुए उन्हें भी हराया जा सकता इस विषय की ओर संकेत करते हुए दिखे। उस समय हमारे देश में ब्रिटिश साम्राज्य की जड़े धीरे-धीरे इस कदर फैल चुकी थी कि उसने हम भारतीयों के आत्मविश्वासों के नींव को हिलाकर रख दिया। जिससे भारतेंदु बेहद प्रभावित हुए और अपने लोगों के मन में आत्मविश्वास की नींव को पुनः गढ़ने का प्रयास करते रहें। इन्हीं सभी घटनाओं को वे अपनी प्रहसन अंधेर नगरीमें प्रकट करते हैं जहाँ वे विदेशी सत्ता के दमन नीतियों का विरोध करते हुए अपने पात्रों द्वारा आंदोलन का बिगुल बजाते हैं। जैसे वे चूरन वाले के माध्यम से यह बताते हैं कि ब्रिटिश साम्राज्य के सिपाही कानून को ताक पर रखकर अपना कर्तव्य पालन करते हैं। इसी प्रहसन के पाँचवे अंक में शिष्य गोवर्धन दास कटाक्ष करते हुए कहता है कि :

“भीतर स्वाहा बाहर सादे।

राज करहिं अमले अरु प्यादे।।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

अंधाधुंध मच्यौ सब देसा।
मानहुं राजा रहत विदेसा।।'**5**

इससे देखकर यह स्पष्ट है कि अँग्रेजों की राजसत्ता उनके अमलों और प्यादों के हाथों में है और वे कानून का तिलांजलि देकर अंधाधुंध अपनी मनमानी करते हैं। निश्चित रूप से यह रचना राजनैतिक परिवेश के प्रति उनकी जागरुकता को व्यंग्य को जरिए प्रस्तुत किया है। डॉ. रामविलास शर्मा के शब्दों में "अँधेर नगरी अँग्रेजी राज्य का दूसरा नाम है।"

भारतेंदु कृत प्रस्तुत प्रहसन में निरंकुश राज्य की अंधी न्याय व्यवस्था का मार्मिक चित्रण है। कथानक के आधार पर जब अँधेर नगरी के राजा को बकरी को मारने वाले के संदर्भ में फैसला करना पड़ता है तब किस प्रकार वह उसमें असफल होता है और फिर दोषी न मिलने पर वह क्रमशः दीवार को, दीवार के मालिक को, कारीगर को, मजदूर को, मसक बनाने वाले को, कसाई को अर्थात् सभी को यहाँ तक कि दीवार को पकड़ लाने तक का आदेश दे देता है और जब न्यायोचित बात सिर नहीं चढ़ती तो वह बेकसूर गोवर्धन दास को ही फाँसी पर चढ़ाने का हुक्म दे देता है। वह कहता है कि'बकरी मारने के अपराध में किसी न किसी को सजा जरूर होनी है। नहीं तो न्याय न होगा।"**6** इससे अधिक सटिक और प्रामाणिक राजनैतिक व्यंग्य शायद ही तब तक किसी विधा में उपलब्ध होता है। इसी प्रहसन के मध्य में चूरन वाले ने सरकारी कर्मचारियों द्वारा कानून पर तीखा व्यंग्य करते हुए पुलिस वालों की भी खूब खिल्ली उड़ाते हुए दिखलायी पड़ते हैं।

गिरीश रस्तोगी का कथन है 'अंधेर नगरी' अंध-व्यवस्था का प्रतीक है। चौपट राजा विवेकहीनता और न्याय दृष्टि के न होने का मूर्त स्वरूप है। उसका न्याय भी अंधता का प्रमाण है क्योंकि एक बकरी की मृत्यु का दंड देने के लिए गोवर्धन को पकड़ लिया गया अर्थात् कोई भी दंडित हो सकता है। अविवेकी, प्रमादी, मूल्यहीन राजा की परिणति तो भारतेंदु ने दिखायी ही है लेकिन साथ ही उन्होंने गोवर्धन के द्वारा मनुष्य की लोभवृत्ति पर भी व्यंग्य किया है।"**7** लोभवृत्ति ही मनुष्य को अंधेर नगरी की अंधव्यवस्था, अमानवीयता में फँसाती है। अंग्रेजो की न्याय-दृष्टि और प्रणाली में भी शोषक-शोषित, अपराधी-निरपराधी में कोई अंतर नहीं था, आज भी हमारी न्याय प्रणाली की यही स्थिति है। उन्होंने अंधेर नगरी के जिन तत्वों लोभ और भोग की ओर संकेत किया है। यही बाजारवाद का मूल है।

भारतेंदु ने इसमें पुलिस की गैरकानूनी करतूतों पर व्यंग्य करते हुआ चूरन वाले से कहलवाया है कि 'चूरन पुलिस वाले खाते, सब कानून हजम कर जाते।**8** इस तरह यह सिद्ध हो जाता है कि समाज के भीतर ब्रिटिश साम्राज्य का समस्त कानून सरकारी कर्मचारियों की दया पर ही निर्भर करता था। भला जिस समाज में ऐसा कानून होगा वहाँ कैसे लोग शांति से रह सकेंगे ?

भारतेंदु ने अपनी प्रहसनों में अपने देश के गौरवमयी अतीत का बखान करते हुए लोगो को उससे परिचय कराते हुए उनकी देशप्रेम को जगाने का प्रयास किया वहीं दूसरी ओर हमारे देश के कुछ लोग जो इन अंग्रेजों से मान-सम्मान तथा धन के लोभ में इनसे मिलकर उनके गुप्तचर के रूप में काम करने लगते थे, उन पर भी व्यंग्य कसा है। इस संदर्भ में वे कहते हैं कि 'भारतवर्ष का अतीत तो एक ओर किंतु वर्तमान युग में भी राजा शिवप्रसाद जैसों ने ब्रिटिश साम्राज्य के तलुवे चाटे और सितारे हिंद की उपाधि प्राप्त की।" इस कटु सत्य पर व्यंग्य

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

की योजना भारतेंदु के नाटक 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' में हुई है, इसमें शिव प्रसाद के अँग्रेजों के पिट्ठू बनने के साथ ही परिणाम स्वरूप 'स्टार आफ इण्डिया' पर व्यंग्य किया गया है।

हमारे देश में ब्रिटिश साम्राज्य के दौरान इसके राजनैतिक क्षेत्र में रिश्वत तथा घूसखोरी का बाजार भी खूब गर्म था। चाहे पुलिस हो या न्यायालय, सभी स्थानों पर बिना रिश्वत के कोई भी काम नहीं होता था। भारतेंदु ने इस पर भी खुलकर विरोध किया। उन्होंने अपने नाटक 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति में न्यायालयों में हो रही घूसखोरी का नग्न चित्र प्रस्तुत किया। एक प्रसंग देखे यमराज के दरबार में श्रीयुत् गृहराज मंत्री चित्रगुप्त को मृत्युलोक की तरह घूस देने का प्रयत्न करता है किंतु श्रीयुत् चित्रगुप्त उससे रुष्ट होकर उसे फटकारते हुए कहते हैं कि "अरे दुष्ट यह भी क्या मृत्युलोक की कचहरी है कि तू हमें घूस देता है और क्या हम लोग वहाँ के न्यायकर्ताओं की भाँति जंगल से पकड़कर लाये गये हैं कि तुम दुष्टों के व्यवहार नहीं जानते। जहाँ से तू आया है और जो गति तेरी है सभी घूस लेने वालों की भी होगी।"**9**

इस प्रकार से हम देख सकते हैं कि जब-जब भारतेंदु को अवसर मिला तबतब उन्होंने अपनी रचनाओं से समाज-सुधार का मार्ग सुगमता से निकाल ही लिया, जिसका सार्थक उदाहरण आज हम सबके सम्मुख हैं।

भारतेंदु के प्रहसन में धार्मिक हास्य-व्यंग्य

भारतेंदु कृत 'वैदीकी हिंसा हिंसा न भवति' और 'पाखंड-विडंबन' आदि प्रहसनों में उनके धार्मिक व्यंग्य की झलकियाँ आसानी से देखी जा सकती हैं। हमारे देश में हमेशा से धर्म के नाम पर जातीय विश्वास और आस्था का गला घोंटा जाता रहा है। लोगों को धर्म के नाम से भ्रमित करते हुए उनकी आस्थाओं से खेला जाता है, जो समय-समय पर अनेक समस्याओं को जन्म देती हैं। भारतेंदु ने प्रारंभ से ही धर्म के नाम पर फैले इन मत-मतान्तरों का पुरजोर विरोध किया। आडंबरों और पाखंडो को एक भ्रमजाल सिद्ध किया। उन्होंने देश में फैले हुए इस अज्ञान अविद्या और नैतिक अवमूल्यन का विरोध किया। इसकी कथा से तत्कालीन राजाओं की निरंकुश अंधेरगर्दी, उनकी अराजकता और मूढ़ता पर व्यंग करना ही इस प्रहसन का उद्देश्य है। वे हिंदुओं की दुर्दशा से दुखी थे। ये हिंदू अपने लाभ-हानि का न सोचकर अंग्रेजों की स्वार्थ पूर्ति में सहायक बने थे। तत्कालीन देश में अंधविश्वास एवं अंधभक्ति की जड़ें बड़ी गहरी हो चुकी थीं। 'अंधेर नगरी' का अंतिम दृश्य इसका सटीक उदाहरण है, जहाँ राजा, सिपाही, गुरू, मंत्री, कोतवाल सभी बिना सोचे-विचारे फाँसी के फंदे पर चढ़ना चाहते हैं। भारतेंदु कहते हैं :

"जहाँ धर्म न बुद्धि नहिं नीति न सुजन समाज।
ते ऐसेहिं आपुहि नसैंए जैसे चौपट राजा।'**10**

वहीं दूसरी ओर हमारे देश में व्यभिचार आदि में कलुषित रूप को प्रदर्शित करने के लिए भारतेंदु ने अपने प्रहसन 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' में इसके लिए मार्मिक व्यंग्यों की संरचना प्रस्तुत की है। इस प्रहसन में राजाओं व पुरोहितों की करतूतों का भंडाफोड़ चित्रगुप्त के माध्यम से करवाया है, जिसमें गंडकीदास जैसे अनेक प्रतीकात्मक पुरोहितों के काले चरित्र को यमपुरी में यम तथा चित्रगुप्त के व्यंग्यात्मक संवादों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। "महाराज, ये गुरु हैं, इनका चरित्र कुछ न पूछिए केवल दंभार्थ इनका तिलक मुद्रा और केवल ठगने के अर्थ इनकी पूजा, कभी भक्ति से मूर्ति को दंडवत् न किया होगा पर मंदिर में जो स्त्रियाँ आयी उनको सर्वदा

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

तकते रहें, महाराज, इन्होंने अनेकों को कृतार्थ किया और समय पर तो मैं श्री रामचंद्र जी का श्री कृष्ण का दास हूँ पर जब स्त्री सामने आवै तो उससे कहेंगे मै राम तुम जानकी, मैं कृष्ण तुम गोपी और स्त्रियाँ भी ऐसी मूर्ख कि फिर इन लोगों के पास जाती हैं, हाँ। महाराज, ऐसे पापी धर्मवंचकों को आप किस नरक में भेजियेगा।"**11**

हमारे देश की काशी नगरी का इतिहास धर्म के सन्दर्भ में अपना स्वर्णिम स्थान रखता है, किंतु तत्कालीन समय में काशी का अध:पतन अपनी चरम सीमा को लांघ चुकी थी। भारतेंदु ने अपने प्रहसनों के द्वारा इसे सुधारने का सार्थक प्रयास किया। इसी के प्रयासस्वरूप दूसरा प्रहसन 'पाखंड-विडंबन' का नाम आता है, जिसमें व्यभिचार और भ्रष्टाचार को रोकने का अथक प्रयास किया गया है। डॉ. वीरेंद्र मेहंदीरत्ता के शब्दों में, "पाखंड विडंबन' रूपक में धर्म के क्षेत्र में भक्ति तथा उपासना के स्थान पर भोग तथा व्यभिचार की प्रधानता दिखाकर बौद्ध भिक्षु, जैन दिगंबर तथा सोमधर्म, कापालिकों का उपहास किया गया है।"**12**

भारतेंदु के प्रहसन में आर्थिक हास्य-व्यंग्य

भारतेंदु ने अपने समकालीन देश की सभी परिस्थितियों के अनुरूप देश की तत्कालीन आर्थिक स्थिति पर भी 'अंधेर नगरी' प्रहसन में अपने विचार प्रकट किये हैं। यह प्रहसन उस समय के हाकिमों की तानाशाही की ओर इशारा करता है। हाकिम क्या है, क्या अल्लाह है, क्या अदना सब भारतीय जनता पर टैक्स लगाने से नहीं चूकते। तभी तो घासीराम चने वाला एक स्थान पर ब्रिटिश सरकार के सरकारी अफसरों पर कटाक्ष कर तीव्र प्रहार करता है "चना हाकिम सब जो खाते, सब पर दूना टैक्स लगाते। कुँजड़िन सब्जी बेचते-बेचते अंत में जब यह कह देती है। जैसे काजी वैसे पाजी।।"**13**

फिर वहीं प्रहसन में सारा सब्जी बाजार को ही उन्होंने अपनी व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग करते हुए दिखते है। जैसे एक जगह पर सरकारी अफसरों की रिश्वतखोरी और अँग्रेज शासकों पर व्यंग्य करते हुए चूरन वाला से वे कहलवाते हैं :

"चूरन अमले सब जो खावै।
दूनी रिश्वत तुरत पचावै ।।
चूरन साहेब लोग जो खाता।
सारा हिंद हजम कर जाता।।"**14**

इस तरह से उन्होंने तत्कालीन देश की आर्थिक परिस्थितियों पर प्रकाश डालते देशवासियों को जगाने का प्रयास किया है। वे अपने देश के प्रति कितना दायित्वशील थे इस बात का प्रमाण उनके समस्त रचनाओं से लगाया जा सकता हैं। वे अपनी नाटक 'भारत दुर्दशा' में भी इसका जिक्र करते हुए कहते हैं कि :

अंगरेजराज सुख साज सजे सब भारी
पै धन विदेश चलि जात इहे अति ख्वारी ।।**15**

यहाँ उनकी देश के प्रति चिंता को आसानी से समझा जा सकता है।

भारतेंदु के प्रहसन में सांस्कृतिक हास्य-व्यंग्य

भारतेंदु ने 'सबै जाति गोपाल की' एवं 'ज्ञाति विवेकिनी' आदि प्रहसनों में अपने देश की दयनीय सांस्कृतिक व्यवस्था का हास्य-व्यंग्यात्मक चित्र खींचा है। हमारे देश में लोगों के जीवन को विषाक्त करने वाली जात-पाँत, ऊँच-नीच की भावना को लेकर लिखे गए उनके दो प्रहसनात्मक संवाद 'सबै जाति गोपाल की' एवं 'ज्ञाति विवेकिनी सभा' है, जिसमें सांस्कृतिक

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

व्यंग्य उभरकर सामने आया है। सबै जाति गोपाल की में पंडित जी दक्षिणा के लिए किसी भी ऊँची जाति को नीची और नीची जाति को ऊँची, यहाँ तक कि मुसलमानों और क्रिस्तानों को भी ब्राह्मण सिद्ध कर सकते हैं। पंडित जी कहते हैं कि "द्वारका में दो भाँति के ब्राहमण थे जिनको बलदेव जी (मुशलीद) मानते थे, उनका नाम मुशलि मान्य हुआ और जिन्हें कृष्ण मानते उनका नाम कृष्ण मान्य हुआ। अब इन दोनों शब्दों का अपभ्रंश मुसलमान और क्रिस्तान हो गया।"**16**

इन्हीं विचारों से ग्रस्त होकर वे मानते है कि हिंदुओं का शास्त्र अब मानों पनसारी की दुकान हो गया और उनके अक्षर कल्पवृक्ष के समान हो गये है। यहीं नहीं इसमें पंडित जी चमारों को भी ब्राह्मण सिद्ध कहते हुए कहते हैं कि "हाँ चमार तो ब्राह्मण हुए हैं, इसमें क्या संदेह है, ईश्वर के चर्म से इनकी उत्पत्ति है, इनको यमदंड नहीं होता। चर्म का अर्थ ढाल है इससे ये दंड रोक लेते हैं। चमार में तीन अक्षर हैं 'च' से चारों वेद, 'म' से महाभारत, 'र' से रामायण अर्थात् जो इन तीनों को पढ़ावै वह ही चमार होता हैं।"**17** इसी प्रकार से पंडित जी के भर और कुनबी और पासी की उत्पत्ति के संबंध में जो विचार हैए वह दर्शनीय रहा है। जैसे, "भारद्वाज से भर कन्व से कुनबी, पराशर ऋषि से पासी सिद्ध होते हैं।"**18**

जिस प्रकार से पंडित जी चमारों, मुसलमानों, भर, कुन्बी व पासी की उत्पत्ति के संबंध को स्थापित किया है उसी प्रकार उसे अग्रवालों और खत्रियों की उत्पत्ति के संबंध में भी कहते हैं कि "दोनों बहूई हैं जो बढ़ियाँ अगर चंदन का काम बनाते थे उनकी संज्ञा अगरवाले की हुई और जो खाट बीनते थे वे खत्री हुए या फिर खेत अगोरने वाले खत्री कहलाए।"**19**

भारतेंदु ने अपनी प्रहसनों में देश के सांस्कृतिक अवमूल्यन पर चिंता व्यक्त की है। अंग्रेजी की अभिवृद्धि के कारण हमारा जातीय सांस्कृतिक गौरव का अवमूल्यन हो रहा था तथा सारा देश सांस्कृतिक दृष्टि से निरीह, विपन्न, दरिद्र होता जा रहा था। उसे भी उन्होंने भलिभाँति अपने प्रहसनों के द्वारा दर्शाने की कोशिश की। आज हमारा शिक्षित समाज भी पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित होकर उसके अंधानुकरण में लगा हुआ हैं और इसी पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से हमारे समाज में अनैतिकता बढ़ती जा रही थी। भारतेंदु को पाश्चात्य गुलामी कभी सहय नहीं हुई। वे कहते थे, 'निजभाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। इससे उनकी अपनी भाषा के प्रति संवेदनशीलता को भलिभाँति समझा जा सकता है। उन्होंने अपने प्रहसनों के माध्यम से पाश्चात्य सभ्यता, रीति-रिवाज, वेश-भूषा, रहन-सहन का अंधानुकरण करने वालों को फटकारा।

इस विवेचन से स्पष्ट होता हैं कि भारतेंदु ने भारतीय संस्कृति का परोक्ष रूप से चित्रण अपने प्रहसनों के माध्यम से किया है। सबै जाति गोपाल की में उन्होंने यह सुझाया है कि दक्षिणा के बदले ये भारतीय संस्कृति के रक्षक अपनी संस्कृति को इस प्रकार लुटाना चाहते हैं जिससे समाज के ठेकेदारों को मुनाफे की कमी न हो। ठीक इसी प्रकार से भारतेंदु द्वारा लिखित एक और प्रहसन ज्ञाति विवेकिनी सभा है, इसके संदर्भ में यह कथन देखिए, "अब देखिए इनके नामार्थ ही में क्षत्रियत्व पाया जाता है। गढ़ारि अर्थात् गढ़ जो किला है उसके अरि तोड़ने वाले, यह काम सिवाय क्षत्री के दूसरे का नहीं है। यदि इसे गूढ़ारि का अपभ्रंश समझें तो यह शब्द भी खत्रियत्व का सूचक है।"**19**

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

उपर्युक्त तथ्यों के विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भारतेंदु ने भारतीय नवजागरण के प्रथम चरण वाले अपने युग की कुप्रवृत्तियों की खिल्ली उड़ायी है। अंग्रेज भारतीयों को असभ्य और असंस्कृत समझते थे। उनके इस दंभ को ध्वस्त करना बेहद आवश्यक था और इस कार्य की शुरुआत भारतेंदुने की। इसके बाद से यह कार्य बड़े पैमाने पर होने लगा।

भारतेंदु आधुनिक हिंदी साहित्य में एक युग प्रवर्तक साहित्यकार थे। उन्होंने अपनी लेखनी के जरिए हिंदी भाषा-साहित्य के साथ-साथ देश में नवजागरण की भी नींव रखी। उन्होंने अपनी लेखनी का आधार हास्य-व्यंग्य को बनाया और उसके आधार पर अपने साहित्य का महल खड़ा किया। वे अपने जीवन में राजभक्तिऔर देशभक्ति के द्वंद से लेकर वैष्णवता और क्रांतिधर्मिता के द्वंद्व से तथा दरबारी संस्कृति और जनसंस्कृति के द्वंद्व से लेकर आधुनिकता और भारतीयता के द्वंद्व से गुजर रहे थे। इन्हीं द्वंद्व को उन्होंने अपनी रचनाओं में खासकर अपने निबंध, नाटक एवं प्रहसनों के द्वारा अभिव्यक्त किया। भारतेंदु के नाट्य साहित्य की विशेष संपत्ति उनके प्रहसन हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1 संपा. शर्मा, हेमंत, भारतेंदु समग्र, प्रचारक ग्रंथावली परियोजना, हिंदी प्रचारक संस्थान, 1987, पृष्ठ 307

2 वही, पृष्ठ 312

3 वही, पृष्ठ 311

4 संपा. ब्रजरत्नदास, भारतेंदु ग्रंथावली भाग एक, नागरी प्रचारणी सभा, 1991, पृष्ठ 622

5 संपा. ब्रजरत्नदास, भारतेंदु ग्रंथावली भाग एक, नागरी प्रचारणी सभा, 1991, पृष्ठ 670

6 भारतेंदु, अँधेर नगरी, भारत ज्ञान-विज्ञान प्रकाशन, पृष्ठ 16

7 रस्तोगी, डॉ. गिरीश, भारतेंदु और अंधेर नगरी अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1996, पृष्ठ 28

8 भारतेंदु, अँधेर नगरी, भारत ज्ञान-विज्ञान प्रकाशन, पृष्ठ 14

9 संपा. शर्मा, हेमंत, भारतेंदु समग्र प्रचारक ग्रंथावली परियोजना, हिंदी प्रचारक संस्थान, 1987, पृष्ठ 531

10 वही, पृष्ठ 317

11 वही, पृष्ठ 361

12 वही, पृष्ठ 158

13 वही, पृष्ठ 530

14 वही, पृष्ठ 531

15 भारतेंदु भारत दुर्दशा विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1953, पृष्ठ 21

16 संपा. शर्मा, हेमंत, भारतेंदु समग्र प्रचारक ग्रंथावली परियोजना, हिंदी प्रचारक संस्थान, 1987, पृष्ठ 542

17 वही, पृष्ठ 542

18 वही, पृष्ठ 542

19 वही, पृष्ठ 543

20 वही, पृष्ठ 546